MAH/MUL/03051/2012
ISSN-2319 9318

Vidyawarta
UGC
Jr.No.62759
UGC Approved Refereed Journal

Vidyawarta®

Issue-21, Vol-11, Jan. to March 2018

International Multilingual Research Journal

Editor
Dr.Bapu G.Gholap

www.vidyawarta.com

ANNIVERSARY CELEBRATIONS
6th
ANNIVERSARY

25) समसामयिक स्त्री पुरुष संबंध
मोहम्मद आदिल इरशाद अहमद || 113

26) २१वीं सदी की प्रमुख कवयित्रियों की हिन्दी कविता में राजनैतिक–संवेदना
डॉ० मृदुल जोशी–श्वेता अग्रवाल || 116

27) मध्यकाल:लोक जागरण के सन्दर्भ में
डॉ० अरविन्द कुमार, चंडीगढ़, यू. टी. || 120

28) जागतिक संदर्भ में सूचना का अधिकार
प्रा.श्रीमती दिप्ती डी.चौरागडे (पालेवार), जि. गोंदिया || 123

29) वन पार्ट वुमन:समाज मान्यताएँ, अपमान एवं घृणा के बोझतले घुटते रिश्ते की..
डॉ. प्रवीणकुमार न. चौगुले, सांगली || 125

30) बैगा जनजाति में महिलाओं की सामाजिक सांस्कृतिक स्थिति
कु. चम्पा धुर्वे, जबलपुर (म.प्र.) || 131

31) भारतीय संगीत में स्वरलिपीकारों का योगदान
डॉ. प्राची एस. हलगांवकर, अकोला || 137

32) हिंदी-मराठी लोकसाहित्य में जन-जीवन और संस्कृति
प्रा. डॉ. गाडे ज्ञानेश्वर गंगाधरराव, बसमतनगर, हिंगोली || 140

33) उपभोक्ता संरक्षण
सीमा नागर, धार (म.प्र.) || 143

34) समकालीन नाटक में बदलते आर्थिक मूल्य
प्रा.डॉ.सुनील एम.पाटिल–प्रा.तुलसा नानुराम मोची || 146

35) संस्कृत काव्यशास्त्रियों की दृष्टि में अलंकार और सौन्दर्य
डॉ. किरन राठौड, जयपुर || 149

36) संस्कृति में मानव मूल्य और नेतृत्व का विश्लेषण
डॉ० राकेश प्रताप शाही, पावानगर (फाजिलनगर) कुशीनगर। || 152

www.vidyawarta.com/03 | http://www.printingarea.blogspot.com

है। महिलाओं का अनादर पूरे समाज का अनादर माना जाता है। यह पुरूषों के साथ बराबरी से कार्य करती है। इनमें पर्दा प्रथा नहीं है। यह शराब एवं मांसाहार की शौकीन होती है। इनका व्यावसाय, मजदूरी, कृषि, कार्य, वनोपज का संग्रह कर बेचकर अपना जीविकापार्जन करना होता है। इन लोगों का सामाजिक परम्पराओं, रीति–रिवाज एवं धार्मिक कार्यो के प्रति अटूट विश्वास है।

शगुन, अपशगुन, जादू–टोटका इनको धार्मिक संस्कृति से जोड़ते है। इनमें अपा जीवन साथी पसंद करने की पूर्ण स्वतंत्रता है। विधवा, तलाकशुदा स्त्री के पुन: विवाह की प्रथा है। बहु पत्नि विवाह की भी प्रथा है। यह अपनी बीमारियों का इलाज परम्परागत झाड–फूंक, तांत्रिक जादू–टोना, वनौषधि, गुनियाई से करने में ज्यादा विश्वास रखती है। इन्हें आधुनिक स्वास्थ्य चिकितसा, अस्पताल की सुविधाओं के प्रति कम रूचि है। साक्षरता का निम्न प्रतिशत, रूढ़ियाँ, अंधविश्वास, अज्ञानता के कारण बैगा स्त्रियाँ सामाजिक, आर्थिक रूप से पिछड़ गई है।

बैगा जनजाति की स्त्रियाँ को शिक्षा, स्वास्थ्य एवं आर्थिक क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनाना होगा इस संबंध में क्षेत्रीय परम्परागत योजना को दृष्टिगत रखते हुये योजना लागू करना होगी तभी इनका सामाजिक–सांस्कृतिक विकास सम्भव होगा इसमें मानवशास्त्री की भूमिका महत्वपूर्ण सिद्ध होगी।

संदर्भ सूची

१. चौबे, डॉ., रमेश शर्मा, डॉ. वंदना (१९९५): सांस्कृतिक मानव विज्ञान, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल.
२. पटेल, डॉ. जी.पी.: मध्यप्रदेश की बैगा जनजाति में परम्परागत चिकित्सा पद्धति का अध्ययन: बुलेटिन ऑफ द ट्राईबल रिसर्च एण्ड एव्लपमेंट इन्स्ट्टीयूट, भोपाल Vol.XIX, June-December, १९९१
३. दुबे, रश्मि,:बैगा परिवार: एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण, मध्यभारती, डॉ. हरीसिंह गौर यूनिवर्सिटी, सागर Vol.XXXVIII, September, 1984.

❑❑❑

31

भारतीय संगीत में स्वरलिपीकारों का योगदान

डॉ. प्राची एस. हलगांवकर
श्री गणेश कला महाविद्यालय,
गोरक्षण रोड, अकोला

****

प्रस्तावना:–

जिस प्रकार मानव–भवनाओं को व्यक्त करने, विचारों को एक दूसरो तक पहूँचाने के लिए भाषा का जन्म हुआ, उसी प्रकार संगीत की भाषा के लिपीबध्द करने के लिए स्वरलिपी की रचना की गई। जब किसी गीत की कविता अथवा साजो पर बजाने की गत को स्वर व ताल के साथ लिखा जाता है उसे स्वरलिपी कहते है। अत: स्वरलिपी वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा संगीत की भाषा को लिपीबध्द किया जाता है।

स्वरलिपी की आवश्यकता:–

हमारा प्राचीन संगीत गुरुमुखी होने के कारण मौखिक रहा है। शिष्य गुरु के सानिध्य में रहकर गुरु–मुख से सुनकर ही विद्या–दान ग्रहण करता था। रागो को जुबानीयाद करना पडता था। प्राचीन काल में उस्तादजी अपनी कला को अपने पुत्र व शिष्यो को सामने बैठाकर सिखाना पसंद करते थे। उस समय लेखन प्रणाली व मुद्रण संबंधी सुविधाएँ आज जैसी नही थी। अतित कलाकारों की कला को सुरक्षित रखने का कोई साधन नही था। इसिलिए स्वरलिपी की आवश्यकता महसूस हूई।

स्वरलिपी निर्मिती का इतिहास:–

भारतीय संगीत में स्वरलिपी पध्दती कोई

आधुनिक न होकर अतिप्राचीन है। प्राचीन काल में भारत में लगभग २५० इ.स. पूर्व अर्थात पाणीनीके समय से पहले स्वरलिपी पध्दती विद्यमान थी। वैदिक काल में सामगान की प्रथा प्रचलित थी। यह परंपरा लुप्त न हो इसलिए तत्कालिन महर्षीयोने उसे संगीत लिपी मे निबध्द किया था। स्वरलिपी के कुछ चिन्ह वैदिक ग्रंथो से लिए हुए दिखाई देते है। उदा. च्ओम भुभुर्वः स्वः तर्त्स वितुर्वरिण्यम' भर्गो उदेतस्यं धीमहि धियोयोर्नः प्रचोदयात् छः। इस गायत्री मंत्र में जिस अक्षरों के उपर खडी रेखा है वह अक्षरे उँचे स्वरों में गाई जाती है और जिस अक्षरों के निचे आडी रेखाएँ है वह निचले स्वरों में गायी जाती है। इन्ही चिन्हो से स्वरलिपी का अविष्कार हुआ। किंतु तब यह स्वरलिपी पध्दती अपने शैशव काल में थी। उस समय तीव्र और कोमल स्वरो के भेद तथा तालमात्रा सहीत स्वरलिपी नही होती थी। अपितु केवल स्वरों के नाम उनकी प्रथम अक्षरों के साथ सरगम के रुप मे दिये जाते थे। उनसे केवल इतनाही बोध होता था की अमुक गायन में अमुक स्वर प्रयुक्त हुए है। तीव्र कोमल स्वरों के चिन्ह न होने के कारण व ताल मात्रा आदि के अभाव में उन स्वरलिपीयों से संगीत के विद्यार्थी लाभ उठाने में असमर्थ रहे। कई मध्यकालीन संगीततज्ञो का ध्यान इस तरफ गया। कुछ विद्वानों ने स्वर व ताल लिपी का निर्माण किया परंतु उन्हे सफलता नही मिली।

भारतीय स्वरलिपीयाँ:—

ब्रिटानिका एनसायक्लोपिडिया भाग—१६, पृष्ठ २१ पर स्पष्ट लिखा है It is probable that the earliest attempts at notation were made by the Hindus and Chines from whom the principal was transferred to Greece, अर्थात संभवतः स्वरलिपी का प्रथम प्रयास हिंदूओ और चिनीओं द्वारा किया गया। तत्पश्चात यह प्रथा युनान को गई। महषी भरत पं निशंक शारंगदेव, पं. सोमनाथइन विद्वानों के ग्रंथो में स्वरलिपी पध्दती का उपयोग किया हुआ है। तिसरी शताब्दी से तेरहवी शताब्दी तक का काल भरत—शारंगदेव काल (पं. कृष्णराव मुले लिखित भारतीय संगीत का इतिहास) सत्रहवी शताब्दी के पूर्वाध में पं. सोमनाथ ने रागविबोध ग्रंथके पंचमाध्यय में तंत्रीवाद्य के लिए स्वरलिपीके २३चिन्हों का प्रयोग किया है। तेरहवी शताब्दीसे उन्नीसवी शताब्दी के तश्तीय खंड के प्रारंभ तक स्वरलिपी को विरोध होता रहा। ब्रिटीश शासनकाल में युरोप से आए विदेशी संगीतप्रेमियों ने अपने देश के महान संगीततज्ञों मोजार्ट वेग्णर, शेपेन आदि की संगीत कृतियों को पाश्चात्य सुरों में लिपीबध्द करके उसका प्रचार व प्रसार किया, जिससे भारतवासी प्रभावित हो उठे और उन्होने अपनी—अपनी स्वरलिपीयाँ निर्माण की।

खाँ साहब मौलाबक्ष (जन्म १८३३):—

मौखिक संगीत को जीवीत रखने हेतू सर्वप्रथम स्वरलिपी का निर्माण किया। स्वरलिपी के प्रथम अधिष्ठाता मौला बक्ष साहेब थे। उन्होने भारतीय संगीत की तत्कालीन अवस्था एंव उसका भविष्य जाणनेहेतू भारत भ्रमण किया। उत्तर भारतीय और दाक्षिणात्य संगीत से क्रियात्मक एवं शास्त्रो को अवलोकन करके पाश्चात्य स्वरलिपी के कुछ चिन्ह एवं स्वयंनिर्मित चिन्हों से स्वरलिपी का अविष्कार किया। उन्होंने लगभग ३० चिन्हों का निर्माण किया जो संपूर्ण भारत मे अपनाया गया। पारंपारिक बंदिशो ओर स्वरचित बंदिशो को स्वरलिपी में लिपीबध्द करके उन्होंने अमुल्य कार्य किया।

मिनाप्पा व्यंकप्पा केलवाडे:—

आप उस्ताद मौलाबक्ष साहब के शिष्य थे। इन्होंने उस्ताद मौलाबक्ष साहब के स्वरलिपी को विकसित रुप देकर १९०७ में मुलाधार छ पुस्तक

की रचना की तथा श्री शिवनारायण तुलसीदास जोशी रचीत पंचरत्न ग्रंथ जो १८९५ में प्रकाशित हुआ। इससे प्रयुक्त स्वरलिपी पध्दती को पूर्व की पध्दती से सुबोध करने का प्रयास किया।

प. विष्णू दिगंबर पलुस्कर

(जन्म १८ अगस्त, १८७२):–

खॉ साहब मौलाबक्ष के पश्चात भारतीय संगीत को उपयुक्त स्वरलिपी बनाने का श्रेय जाता है। संगीत के दुसरे अधिष्ठाता पं. विष्णू दिगंबर पलुस्कर जी को उन्होने पाश्चात्य संगीत स्वरलिपी बनाने का श्रेय जाता है। संगीत के दूसरे अधिष्ठाता प. विष्णू दिगंबर पलुस्कर जी को उन्होने पाश्चात्य संगीत स्वरलिपी, कर्नाटकी संगीत एवं स्वंय निर्मित कुछ चिन्हों को मिलाकर एक नयी स्वरलिपी पध्दती का गठन किया। उन्होंने स्वरलिपी पध्दतीमे स्वरों के सुक्ष्म भेद (तीव्रता, तीव्रतम, अतिकोमल आदि) गमक, आवाज का छोटा–बड़ापन, ताल की लयकारी आदि के लगभग कुल ५० चिन्ह बनाये किंतु सामान्य विद्यार्थीयों के लिए यह जटिल प्रस्तुत हुए। उनके पश्चात उनके शिष्यों, प्रशिष्यों ने उसमें कुछ बदलाव करके उसे सरल करने का प्रयास किया जो आज अ.भा.गंधर्व महाविद्यालय मंडलद्वारा प्रचलित है।

प. विष्णू नारायण भातखंडे

(जन्म १०अगस्त, १८६०):–

हिंदूस्थानी संगीत की स्वरलिपी तिसरे अधिष्ठाता पं.विष्णू नारायण भातखंडे है। पंडीतजीने अपनी स्वरलिपी पध्दती में वेदान्त एवं प्राचीन ग्रंथो के आधार पर ही चिन्हों का प्रयोग किया है। पंडितजीने स्वरलिपी निर्माण के लिए अविरत परिश्रम किए। संपूर्ण भारत भ्रमण करके सभी घरानों के उस्तादो की सेवा करके उनकी चिजो का ग्रहण करके उन्हे स्वरबध्द किया। सामान्य विद्यार्थीयों के लिए क्लिष्टता न रखते हुए सुलभ स्वरलिपी का निर्माण करके भारतीय संगीत जगत में अमुल्य योगदान दिया।

सारांश:–

यद्यपि इन स्वरलिपी पध्दतीयों में गायक के गले की सभी विशेषताएँ लिपीबध्द करना संभव नही हो सका। फिर भी वर्तमान स्वरलिपी पध्दतीयों से संगीत विद्यार्थीयों को जो सहायता मिली है और मिल रही है उसे भुलाया नही जा सकता। भारतीय संगीत को जीवित रखने का श्रेय स्वरलिपी को है। गुरु–मुख से सिखी बंदिश अगर तुरंत लिपीबध्द की जाये तो वह कायम रहती है। गले की बारकियॉ छोडी भी जाए तो भी उसका छायाचित्र हमे दिखाई देता है। ऐसी अनेक बंदिशे है जो लिपीबध्द न होने के कारण लुप्त हो गई। चिन्हलिपी, चित्रलिपी, वर्गलिपी या स्वरलिपी इनके द्वारा अतित को हम जीवित रख सकते है। हमारे जीवन में लिपी का महत्वपूर्ण स्थान है। अगर स्वरलिपी का निर्माण नही होता तो संगीत अध्ययन रह जाता। यह निर्विवाद सत्य है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:–

१) संगीत विशारद–बसंत
२) संगीत निबंध–आर एम. अग्निहोत्री
३) संगीत शास्त्र परिचय–मोहना मार्डीकर
४) संगीत शास्त्राचे गाईड–पं. अरविंद गजेंद्र गडकर
५) संगीत कला विहार–२००७
६) उपकार प्रकाशन–डॉ. निशा रावत

❑❑❑

Pay U Money
Online/Net Banking
Debit Card/Credit Card

PAYTM
Payment Accepted here
7588057695
9850203295

Pay

www.vidyawarta.com

विद्यावार्ता

BHIM APP
Mobile Application
Online/Net Banking

BHIM

SBI BUDDY
9850203295

Buddy
Merchant

IMPACT 5.131 iijif FACTOR

Indexed

Indexed

Publisher & Owner
Archana Rajendra Ghodke
Harshwardhan Publication Pvt.Ltd.
At.Post.Limbaganesh, Tq.Dist.Beed-431 126
(Maharashtra) Mob.09850203295
E-mail: vidyawarta@gmail.com
www.vidyawarta.com

Edit By
Dr. Gholap Bapu Ganpat
Parli Vaijnath, Dist.Beed 431 515
(Maharashtra, India)
Cell : +91 75 88 05 76 95

₹ 400/-

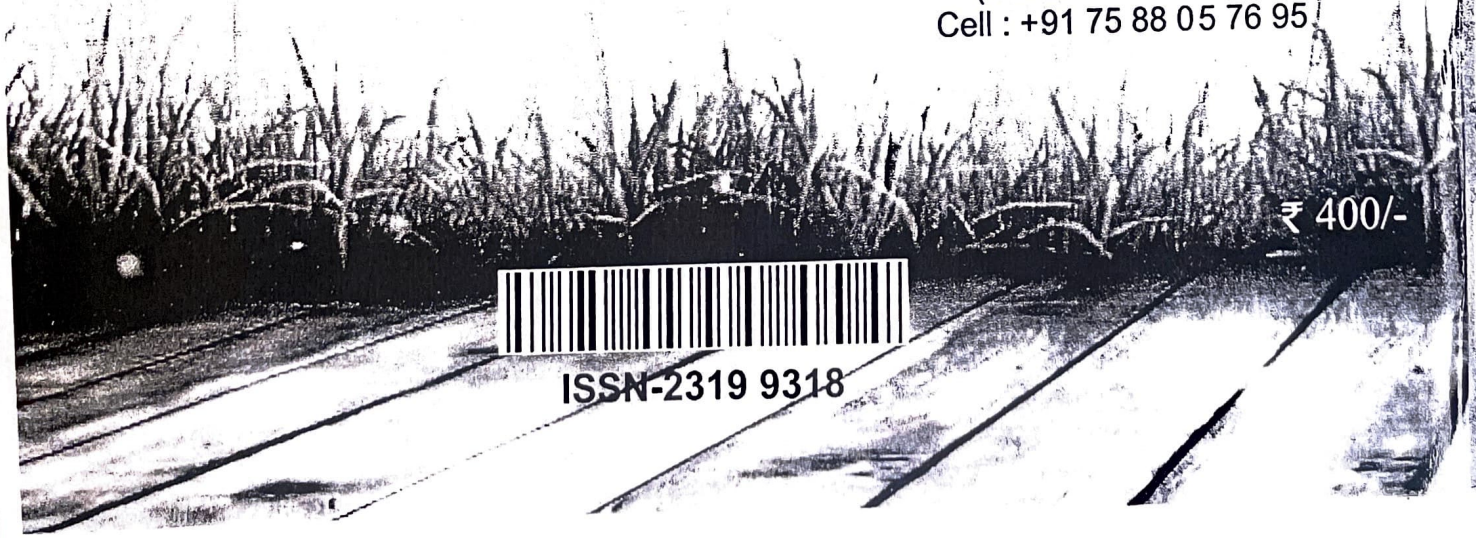

ISSN-2319 9318